THE TIMES OF INDIA

Date:21-09-22

Judging It Right

Trial courts think too little before awarding death penalties. But will they follow new rules SC frames?

TOI Editorials

A constitution bench is now entrusted with the job of evolving uniform norms for hearing arguments on those cases where the death penalty is a potential sentencing option. Given the finality of capital punishment and the many worrying tendencies of lower courts, a code of procedural dos and don'ts will really help. In fact, Supreme Court's scrutiny, initially by a three-judge bench, was set off by a trial court giving death penalty to a convicted person on the same day the prosecution won the case. Good judicial practice demands judges consider mitigating circumstances – a traumatic past, mental health – before pronouncing a death sentence. With the Criminal Procedure Code sketchy on what a meaningful sentencing hearing should entail, trial court judges getting authoritative SC guidance will help.

India seldom executes death row prisoners, reserving it for truly "rarest of rare" crimes – 26/11 terrorist attacks in Mumbai or the 2001 attempt to storm Parliament or the Nirbhaya gangrapemurder. Nevertheless, trial courts hand out dozens of death penalties every year. Laws that prescribe the death penalty range from IPC 302 (murder) to the anti-terror UAPA to the amended POCSO Act that deals with sexual offences against children. But trial judges interpret these statutes too liberally, despite high courts confirming only a small fraction of death sentences.

NLU Delhi's Project39A reveals 144 death sentences awarded in 2021 against 78 in 2020, and a total of 488 prisoners on death row till December 2021. Meanwhile, HCs confirmed 6 death sentences, commuted to life imprisonment 25, and acquitted 29. Corresponding numbers for SC were 0, 5 and 4. Note that 33 prisoners on death row were acquitted on appeal. This is one of the arguments used by those sceptical of keeping capital punishment in the statutes. Poorer convicts often don't receive quality legal assistance and a capital punishment for an innocent is an irretrievable miscarriage of justice.

So SC laying down guidelines for hearing arguments on sentencing is hugely relevant. But SC should note its guidelines are often ignored by trial courts. Despite SC reading down sedition decades ago, many subordinate courts wouldn't grant bail to those accused, even if the charges were patently absurd. Even news of Section 66A of the IT Act being struck down made no difference to many magistrates. So, the constitution bench must not only settle the matter quickly but also ensure lower courts follow its rules.

THE HINDU

Date:21-09-22

Talking Governor

Kerala is witnessing an ugly spat between the Governor and the Chief Minister

Editorial

Kerala Governor Arif Mohammad Khan's outburst against the ruling Communist Party of India (Marxist) and its functionaries including Chief Minister Pinarayi Vijayan marks an escalation in tensions between him and the elected government. Until now, Mr. Khan and Mr. Vijayan had maintained a functional relationship despite their apparent differences. At the heart of the current flare-up is Kannur University's controversial decision to appoint the wife of Mr. Vijayan's private secretary as an associate professor. Mr. Khan, who is also the chancellor of the university, has been critical of the move, but his decision to hold a full-length press conference crossed a line and damaged the majesty of his office. In the presser, Mr. Khan lashed out at CPI(M) functionaries and labelled some of their actions as being anti-national, nepotism, and anti-social. As an unelected appointee of the Centre, a Governor of a State is expected to appreciate the popular mandate of the elected government. By going public with his views, Mr. Khan has precipitated a situation which should have been avoided. The CPI(M) and other parties in the ruling Left Democratic Front (LDF), led by Mr. Vijayan have reciprocated the Governor's feelings, making the exchange a nasty episode. Among other things, representatives of the ruling front have called Mr. Khan an unhinged agent of the Rashtriya Swayamsevak Sangh (RSS). Mr. Khan could have raised his concerns, however valid as he might deem them to be, with Mr. Vijayan rather than triggering a completely avoidable public spat.

Mr. Khan's unprecedented public criticism of the elected government is incongruous with the high office that he holds, but the issues that he has raised put the ruling front on the defensive. One can debate whether a Governor is mandated to enforce standards of governance, but Mr. Khan is evidently not restrained. He had raised a hue and cry over the practice of State pensions to political appointees who serve as personal staff of Ministers for 30 months. Mr. Khan has now locked horns with the LDF over governance questions related to universities and the crippling of the Lok Ayukta, the anti-corruption ombudsman that might lose its powers to punish to the State Assembly. The Governor has made it clear that he will not be signing two Acts, one related to higher education and one on Lok Ayukta. Regardless of the Assembly's powers to make such laws, the moral case for doing so is rather tenuous. Electoral majority is the foundation of representative democracy, but institutional checks and balances are also its integral parts. The elected government and the Governor should both pipe down, and discuss these questions in a calm manner with the objective of seeking solutions and advancing the State's development.

दैनिक भास्कर

Date:21-09-22

काम से जी चुराने का कोई फायदा नहीं

चेतन भगत, (अंग्रेजी के उपन्यासकार)

क्वाइट क्विटिंग ने इधर अनेक कामकाजी लोगों का ध्यान खींचा है। इसका मतलब है अपने जॉब में कम से कम काम करना, जितने प्रयासों की आवश्यकता है उससे कम प्रयास करना और उतना ही करना जितने की आपसे उम्मीद की जाती है। पांच बजे लैपटॉप बंद कर देना और ऑफिस से निकलते ही दिमागी और भावनात्मक रूप से उससे अलग हो जाना। सॉरी बॉस, मेरा हो गया। तो हमारा समाज अब इस मुकाम पर आ गया है, जिसमें नौजवानों को इस बात के लिए प्रेरित किया जा रहा है कि वे खद को काम में पूरी तरह से झोंक न दें। आखिर वर्क-लाइफ बैलेंस को गड़बड़ाने और सेहत को दांव पर लगाने से क्या फायदा, जब आपको बदले में ज्यादा कुछ नहीं मिलने वाला? यकीनन, हमें सैलेरी की जरूरत है, जिसके लिए जॉब करना पड़ता है, लेकिन उसके लिए ज्यादा मेहनत क्यों करें?

वैसे थ्योरिटिकली बात करें तो ऊपर दिए तर्कों में कुछ तो सच्चाई है। लेकिन अफसोस कि क्वाइट क्विटिंग व्यावहारिक नहीं। अगर कोई युवा क्वाइट-क्विट कर रहा है तो उसके सीनियर्स उसे औसत क्षमताओं वाला, प्रेरणाशून्य और निष्क्रिय समझेंगे। ये उसके लिए अच्छी बात नहीं होगी। अगर आप क्वाइट क्विंटिंग कर रहे हैं तो आपके सीनियर्स को पता चल जाता है, वे आपको उसके आधार पर जज करते हैं और यह आपके करियर के लिए नुकसानदेह हो सकता है। लेकिन इससे पहले कि हम क्वाइट क्विटिंग पर और बातें करें, एक दूसरे पहलू पर भी विचार कर लेना दिलचस्प होगा।

एक कम्पनी के फाउंडर और सीईओ ने लिंक्डइन पर पोस्ट लिखते हुए युवाओं से आग्रह किया कि वे कड़ी मेहनत करें, जो कि क्वाइट क्विटिंग का पूरी तरह से विपरीत होगा। मैं यहां उनकी पोस्ट जस की तस प्रस्तुत कर रहा हूं : 'अगर आप 22 साल के हैं और जॉब में नए-नए आए हैं तो खुद को काम में झोंक दीजिए। अच्छा खाइए और फिट रहिए, लेकिन कम से कम 4-5 वर्षों तक दिन में 18 घंटे काम करने की तैयारी रखें। मैं अनेक ऐसे युवाओं को देखता हूं, जो इस बात सेकंविंस हो चुके हैं कि उन्हें वर्क-लाइफ बैलेंस बनाना चाहिए, परिवार के साथ समय बिताना चाहिए, तरोताजा होकर ही काम पर लौटना चाहिए वगैरा वगैरा। ऐसा नहीं कि इन सब चीजों का महत्व नहीं है। इनका महत्व है, लेकिन कॅरियर की इतनी शुरुआत में नहीं। शुरू में तो आपको काम की ही पूजा करनी चाहिए, फिर चाहे वह कोई भी काम हो। आप अपने करियर के पहले पांच सालों में जो मुकाम बनाते हैं, वह पूरे जीवन आपके काम आता है। तो रैंडम रोना-धोना मत कीजिए। दमखम दिखाइए और काम में जुट जाइए।'

वॉव, दिन में 18 घंटे काम! उत्साही सीईओ महोदय का कहना है कि अच्छा खाएं और फिट रहें लेकिन 18 घंटे काम करें। सर, दिन में 24 घंटे होते हैं, जिनमें से कोई 18 घंटे काम करेगा तो बाकी के छह घंटों में वह कैसे अच्छा खा लेगा और तंदुरुस्त रह सकेगा? तब घर के कामकाज करने और रिलेशनशिप वगैरा की बात तो रहने ही दें। वैसे एक कर्मचारी को कितने घंटे सोना चाहिए? दो घंटे?

यह सच है कि युवाओं को कड़ी मेहनत करनी चाहिए, लेकिन किस चीज के लिए? क्या आप अपने जीवन के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए मेहनत करते हैं? क्योंकि जीवन का मतलब केवल करियर नहीं होता। इसमें हेल्थ और रिलेशनशिप्स भी शामिल हैं। हेल्थ तब होगी, जब आप खूब सोएंगे, कसरत करेंगे और पोषक आहार लेंगे। रिलेशनशिप्स का मतलब है दोस्तों, परिवार, अहम लोगों के साथ समय बिताना। अगर आप फिटनेस, नींद, भोजन और रिलेशनशिप्स में दिए समय को जोड़ लें तो आपके पास दिन में औसतन 10-12 घंटे का ही समय बचेगा, फिर आप चाहे कितने ही सुपर हार्ड वर्कर क्यों न हों। लेकिन अगर आप एकाग्रता से काम करते हैं तो उतना भी काफी है। मनुष्यों को 18 घंटे काम करने की जरूरत है भी नहीं। वास्तव में बहुतेरे लोगों के लिए छह से आठ घंटे फोकस्ड होकर काम करना ही कठिन है। तो मेहनत जरूर करें, लेकिन मनुष्य के शरीर और दिमाग की जितनी क्षमताएं हैं, उनके भीतर ही। यह भी याद रखें कि क्वाइट-क्विटिंग जैसी चीजें लम्बे समय के लिए आपके काम नहीं आएंगी। अगर आप इसके बारे में सोच रहे हैं: तो सम्भव है कि या तो आपको अपना काम पसंद नहीं है या आप अपने काम के माहौल के साथ सहज नहीं। "

तब समस्या का बेहतर समाधान क्वाइट क्विट के बजाय क्वाइट वर्क होगा। क्वाइट वर्क यानी वह काम, जो आप अपने करियर और जीवन को आगे बढ़ाने के लिए करते हैं। इसमें नया जॉब ढूंढना, नेटवर्किंग करना, कहीं और जाकर पढ़ाई करना, बिजनेस प्लान बनाना और हर वो चीज करना शामिल है, जो आपको अपने मौजूदा काम की झंझट से बाहर ले जाए। क्वाइट वर्क का मतलब है अपनी सिचुएशन बदलने के लिए इतनी खामोशी से काम करना कि आपके आसपास किसी को भनक तक न लगे। क्योंकि आप अब भी अपना मौजूदा काम अच्छे से कर रहे होते हैं, भले ही वह आपको पसंद न हो। भीतर ही भीतर आप जानते हैं कि यह कुछ समय के लिए है। आप क्वाइट वर्क अपने हालात को बेहतर बनाने के लिए करते हैं। हम अकसर अपने जीवन में उन हालात के बंधक बनकर रह जाते हैं, जिन्हें पसंद नहीं करते। हम में इतना धैर्य होना चाहिए कि उनसे बाहर आने के लिए काम करते हुए उनका सामना करते रहें। क्वाइट क्विटिंग करके काम में नाम खराब करना तो कोई समाधान नहीं है

Date:21-09-22

समरकंद से खली हाथ न लौटे , पर सार्क ज्यादा जरूरी

डॉ. वेदप्रताप वैदिक, (भारतीय विदेश निति परिषद् के अध्यक्ष)

उजबेकिस्तान के समरकंद में पिछले सप्ताह शंघाई सहयोग संगठन का शिखर सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन का महत्व भारत के लिए विशेष है, क्योंकि अब साल भर तक भारत इसका अध्यक्ष रहेगा। पिछले तीन साल से यह कोरोना के कारण टलता गया था। भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ-साथ चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग और पाकिस्तान के प्रधानमंत्री शाहबाज शरीफ भी इसमें शरीक हुए थे। इन दोनों देशों के साथ भारत की खटपट चल रही है। अध्यक्ष के तौर पर अब भारत और इन दोनों । देशों के बीच सीधी बातचीत भी जरूर होगी। अगला सम्मेलन दिल्ली में होगा तब शी और शरीफ को निमंत्रित भी किया जाएगा। समरकंद सम्मेलन के कुछ दिन पहले ऐसी घटनाएं हुई थीं, जिनसे आशा जगी थी कि ये तीनों राष्ट्र शायद आपसी संवाद कायम कर लें। मोदी ने पाकिस्तान की प्राकृतिक आपदा पर दुःख जताया था और । पूर्वी लद्दाख से चीनी फौजों की वापसी शरू हो गई थी।

लेकिन इसके बावजूद शी और शरीफ से मोदी का कोई सीधा संपर्क नहीं हुआ। फिर भी मोदी की यह समरकंद-यात्रा सफल रही, क्योंकि रूस, ईरान, तुर्की और उजबेकिस्तान के नेताओं से उनका संवाद हुआ। । इन चारों शिखर-भेंटों में भारत की विदेश नीति के कई लक्ष्य सिद्ध हुए और भारत के राष्ट्रहित-संपादन के कई नए रास्ते खुलने की उम्मीद बंधी। रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन को स्पष्ट संदेश मिला कि भारत रूसयूक्रेन युद्ध के पक्ष में नहीं है और वार्ता ही उसका एकमात्र हल है। पुतिन ने मोदी को जन्मदिन की अग्रिम बधाई दी और भारतीय-संस्कृति की सराहना की। उन्होंने दोनों देशों के बीच वीजा-मुक्त यात्रा का प्रस्ताव भी रखा। रूस-यूक्रेन युद्ध पर भारत की तटस्थता की भी कोई आलोचना पुतिन ने नहीं की। दो महाशक्ति-गुटों से शीतयुद्ध-काल में हमारी स्म-दरी की नीति थी, अब यह: सम-सामीप्य की नीति बन गई है। यही नीति शीतयुद्ध में अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री सरदार मुहम्मद दाऊद खान ने चला रखी थी। भारत की यूक्रेन-नीति का मौन-समर्थन अमेरिका भी करता है। उसने रूस से बढ़े तेल-आयात की आलोचना नहीं की।

ईरान के राष्ट्रपति इब्राहिम रईसी और मोदी की भेंट : पहली बार इस शिखर-सम्मेलन के बहाने हुई। भारत पिछले कई वर्षों से ईरान से बड़ी मात्रा में तेल आयात करता रहा है लेकिन 2018-19 से यह आयात बंद करना पड़ा है, अमेरिकी प्रतिबंधों के कारण। दोनों नेताओं ने मध्य एशिया और दक्षिण एशिया के बीच परिवहन सुविधाएं खोलने पर विचार किया। पाकिस्तान अपने थल-मार्ग खोल दे तो अफगानिस्तान, ईरान और मध्य एशिया के राष्ट्रों से भारत का व्यापार सुगम हो सकता है लेकिन पाकिस्तान के अडंगे से निपटने के लिए ही भारतईरान ने मिलकर चाहबहार के बंदरगाह पर निर्माण कार्य शुरू किया है। तुर्की के राष्ट्रपति एर्दोअन से मोदी के संवाद का भी विशेष महत्व है। उन्होंने कश्मीर के सवाल पर भारत के विरुद्ध विषवमन किया था लेकिन भेंट में उनका बर्ताव मैत्रीपूर्ण रहा।

शंघाई सहयोग संगठन को अस्तित्व में आए दो दशक हो गए लेकिन वह जिन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए बना था, उन पर कोई खास काम नहीं हुआ है। न यह आतंकवाद को खत्म कर पाया, न अपने सदस्य राष्ट्रों में बह रही अलगाववाद की लहरों को रोक पायाऔर न ही आपसी व्यापार आदि को बढ़ा पाया, लेकिन इसके जरिए सदस्य-राष्ट्रों में आपसी संवाद जारी रह पाता है। भारत के लिए चिंता का विषय यह है कि दक्षेस (सार्क) भी पिछले सात-आठ साल से ठप्प पड़ा है। उसका कोई सम्मेलन पाकिस्तान के अडंगे की वजह से हो नहीं पा रहा है। शंघाई संगठन के मुकाबले दक्षेस पर भारत को ज्यादा जोर देना चाहिए, क्योंकि उसके सारे सदस्य-राष्ट्र भारत के बृहद आर्य परिवार के ही सदस्य रहे हैं और उनमें कोई चीन, रूस और अमेरिका जैसी महाशक्ति नहीं है। भारत के प्रबद्ध नागरिक एक गैरसरकारी जन-दक्षेस की पहल भी कर सकते हैं।

दैनिक जागरण

Date:21-09-22

शंघाई सहयोग संगठन कितना सार्थक

हर्ष वी पंत, (लेखक नई दिल्ली स्थित आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में रणनीतिक अध्ययन कार्यक्रम के निदेशक हैं)

उज्बेकिस्तान के समरकंद में आयोजित शंघाई सहयोग संगठन यानी एससीओ का शिखर सम्मेलन बीते दिनों चर्चा में रहा। उसकी सबसे खास झलकियों की बात करें तो प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन की मुलाकात बड़ी खास रही। उसमें मोदी ने पुतिन से कहा कि 'यह युद्ध का युग नहीं है!' प्रधानमंत्री का संकेत यूक्रेन को लेकर था। हालांकि यूक्रेन युद्ध की शुरुआत से ही नई दिल्ली का यही रुख है, लेकिन मोदी का सार्वजनिक रूप से इसे रेखांकित करना यह दर्शाता है कि रूस के लिए चुनौतियां बढ़ गई हैं और यह उसकी योजनाओं के अनुरूप दिशा में नहीं जा रहा। देश में जिस गति से मतांतरण हो रहा है, उसे राष्ट्रांतरण के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता। गंभीर समस्याओं पर शुतुरमुर्गी रवैया, राष्ट्रघाती समस्याओं पर सरकारों की चुप्पी घातक यह भी पढ़ें यूक्रेन युद्ध को लेकर न केवल भारत, बल्कि चीन की असहजता भी स्पष्ट दिखती है। स्वयं पुतिन यह स्वीकारोक्ति करते दिखे कि वह यूक्रेन युद्ध के मसले पर चीन के 'सवालों और चिंता' को समझते हैं, वह भी तब जबकि चीन ने सार्वजनिक रूप से ऐसा कुछ नहीं कहा। उलटे पुतिन से राष्ट्रपति शी चिनफिंग की मुलाकात पर चीन यही दर्शाने पर जोर देता रहा कि दोनों नेताओं की बैठक अमेरिकी चुनौती से निपटने के साझा प्रयासों पर केंद्रित रही। चीन ने यही मंशा दिखाई कि वह रूस के साथ काम करने का इच्छुक, महाशक्तियों की जिम्मेदारी से अवगत और अस्थिरता से गुजर रही दुनिया में स्थायित्व और सकारात्मक ऊर्जा के संचार में भूमिका निभाने की दिशा में सक्रिय है। इसके बावजूद वैश्विक चुनौतियों के मुद्दे पर मोदी कहीं ज्यादा मुखर थे, जब उन्होंने पुतिन से कहा, 'हम पहले भी कई बार फोन पर इस विषय में बात कर चुके हैं।' मोदी का आशय खाद्य सुरक्षा, ईंधन सुरक्षा और उर्वरक उपलब्धता से जुड़ा था, जो कि आज विश्व की सबसे बड़ी समस्या के रूप में उभरी हैं। इस लिहाज से दुनिया के कई नाजुक देशों पर यह समस्या बहुत भारी पड़ रही है। मोदी ने शांति के पथ पर अग्रसर होने की पैरवी करते हुए पुतिन को 'लोकतंत्र, कूटनीति और संवाद' की महत्ता का भी स्मरण कराया।

व्यापक संदर्भों से देखें तो एससीओ शिखर सम्मलेन का आयोजन काफी भव्य रहा। इसके विस्तार के भी संकेत दिखे। बहरीन, मालदीव, कुवैत, संयुक्त अरब अमीरात एससीओ में नए संवाद सहयोगी बनाए गए हैं, जबकि मिस्र, सऊदी अरब और कतर के लिए यह प्रक्रिया आरंभ की गई है। इसका 121 सूत्रीय समरकंद घोषणापत्र भी खासा महत्वाकांक्षी है, जो 2023-27 के लिए व्यापक कार्ययोजना निर्धारित करते हुए एससीओ सदस्य देशों के बीच मित्रता और सहयोग से संबंधित प्रविधानों का खाका खींचता है। इसके बावजूद इस सम्मेलन ने समूह के भीतर विभाजक रेखाओं को भी स्पष्ट किया। यूक्रेन पर रूसी हमले के बाद यह पुतिन और चिनफिंग की पहली मुलाकात थी और इसमें शी अपने रूसी समकक्ष को जुमलों के अलावा और कुछ नहीं दे पाए। जबकि चीन बड़ी मात्रा में रूस से सस्ता तेल खरीद रहा है, लेकिन उसने रूस को अभी तक कोई बड़ी मदद नहीं पहुंचाई है। समरकंद में शी यूक्रेन पर किसी भी प्रकार की चर्चा से बचे। इसके बजाय

उन्होंने मध्य एशिया में चीन की व्यापक भूमिका पर जोर दिया, क्योंकि रूस अभी इस मोर्चे पर कुछ खास नहीं कर सकता। देखा जाए तो चीन-रूस संबंध समय के साथ एकतरफा होते जा रहे हैं और एससीओ इसकी पुष्टि का ताजा पड़ाव बना।

इस सम्मेलन के जरिये रूस पश्चिम को यह दिखाने की फिराक में था कि वह अलग-थलग नहीं पड़ा, मगर उसके लिए यह मंच असहज करने वाला सिद्ध हुआ, क्योंकि यूक्रेन पर रूसी आक्रामकता पर शायद ही कोई सदस्य खुलकर मास्को के समर्थन में आया हो। यह भी स्पष्ट हो रहा है कि रूस कहीं ज्यादा तेजी से यूक्रेन में अपना नियंत्रण गंवा रहा है। रूस के विकल्प भी सीमित होते जा रहे हैं। इसका प्रभाव एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में उसकी हैसियत पर भी पड़ रहा है। समय के साथ जाहिर होती रूस की कमजोरियों से पूर्व सोवियत राष्ट्रों की अपने भविष्य के प्रति चिंता बढ़ी है। मास्को पर उनकी निर्भरता एक बड़ी चुनौती है, क्योंकि कमजोर रूस अपने आर्थिक एवं सामरिक मामलों को प्रभावी रूप से संभालने में सक्षम नहीं रहेगा। जहां रूस अभी यूक्रेन में फंसा है, वहीं आर्मेनिया और अजरबैजान में कुछ दिन पहले ही तनाव फिर से बढ़ गया। जिस समय एससीओ में अच्छे पड़ोस को लेकर प्रवचन हो रहा था, उसी दौरान मध्य एशिया में किर्गिस्तान-ताजिकिस्तान सीमा पर संघर्ष का नया मोर्चा खुल गया। उनकी हजार किलोमीटर लंबी सीमा में से एक तिहाई हिस्से पर विवाद है। एक अन्य मध्य एशियाई देश कजाखस्तान ने भी यूक्रेन पर रूस का समर्थन करने में हिचक दिखाई और ऊर्जा आपूर्ति के लिए पश्चिम का रुख कर रहा है। इस क्षेत्र के अधिकांश देश व्यापार विविधीकरण कर रूस पर अपनी निर्भरता घटाने के प्रयास में हैं। पिछले महीने ही ताजिकिस्तान में अमेरिकी नेतृत्व में हुए सैन्य अभ्यास में ताजिकिस्तान, कजाखस्तान, किर्गिस्तान, मंगोलिया, पाकिस्तान और उज्बेकिस्तान ने हिस्सा लिया। स्पष्ट है कि मध्य एशियाई देश पश्चिमी देशों और चीन एवं भारत जैसी उभरती आर्थिक महाशक्तियों के साथ नए अवसर तलाश रहे हैं। रूस उनके लिए समस्या जैसा बन गया है।

एससीओ पर धूमधड़ाके के बीच कोई संदेह नहीं कि भविष्य में इस मंच के लिए चुनौतियां और बढ़ेंगी। मध्य एशिया में बेहतर पहुंच और मुक्त आवागमन के लिए नई दिल्ली का इसमें दांव समझ आता है। वहीं अधिकांश मध्य एशियाई देशों की तरह रूस और चीन द्वारा इसे पश्चिम विरोधी मंच बनाने में उसकी कोई दिलचस्पी नहीं। चीन को व्यापक रूप से नजरअंदाज कर भारत ने रूस को इस रुख से अवगत करा दिया है। जब भारत सदस्य देशों से आतंकवाद के विरुद्ध साझा सहमति की उम्मीद लगाए था, उसी दौरान चीन संयुक्त राष्ट्र में पाकिस्तानी आतंकी साजिद मीर का समर्थन करके उसे नाउम्मीद कर रहा था। चार महीनों में बीजिंग की ऐसी तीसरी कोशिश ने भारत-चीन संबंधों के समीकरण और बिगाड़ दिए। इससे स्पष्ट है कि एससीओ के भीतर आंतरिक विरोधाभास ही भविष्य में उसकी प्रगति में बाधक बने रहेंगे।

जनसत्ता

Date:21-09-22

दंड बनाम दायित्व

संपादकीय

जघन्यतम अपराध के मामलों में हमारे यहां मृत्युदंड का प्रावधान है। मगर इस विधान को समाप्त करने की मांग लंबे समय से उठती रही है। तर्क दिया जाता है कि मृत्यु के बाद अपराधी के सुधरने की गुंजाइश समाप्त हो जाती है। इसलिए दुनिया के बहुत सारे देशों ने मृत्युदंड का प्रावधान समाप्त कर दिया है। इन तर्कों के आलोक में हमारे यहां भी अदालतें मृत्युदंड सुनाने से पहले अनेक बार विचार करती हैं। फिर दंड सुनाए जाने के बाद भी उसे चुनौती देने और बार-बार उसके औचित्य पर विचार की भरपूर गुंजाइश छोड़ी गई है। मगर जब अदालतों को सैद्धांतिक रूप से लगता है कि किसी अपराध के लिए कठोरतम सजा मृत्युदंड ही हो सकती है, तभी वे इसका आदेश देती हैं। इस पर अब सर्वोच्च न्यायालय ने फिर से मंथन जरूरी समझा है। एक मामले में मध्य प्रदेश के उच्च न्यायालय ने मृत्यदंड की सजा सुनाई थी। उसे सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई थी। तीन जजों की पीठ ने उस पर सुनवाई करने के बाद फैसला सुरक्षित रख लिया था। अब उस पर विचार के लिए पांच जजों की पीठ को भेज दिया गया है। फैसला सुरक्षित रखते हुए शीर्ष अदालत ने कहा था कि मृत्युदंड एक ऐसी सजा है, जिसके बाद दोषी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है और उसके मरने के बाद फैसले को किसी भी हाल में पलटा या बदला नहीं जा सकता।

मृत्युदंड को लेकर सर्वोच्च न्यायालय का रुख मानवीय है। अदालत ने यह भी कहा है कि अगर अपराध सिद्धांत के आधार पर अदालत इस नतीजे पर पहुंचती है कि मौत की सजा जरूरी नहीं तो उसे उसी दिन उम्रकैद की सजा देने की आजादी होनी चाहिए। दरअसल, निचली अदालतों और उच्च न्यायालयों के सामने अक्सर यह अड़चन पेश आती है कि वे जघन्यतम अपराधों के लिए कठोरतम सजा के रूप में किसका चुनाव करें, मृत्युदंड या उम्रकैद। कई मामलों में उम्रकैद की सजा अपर्याप्त लगती है। इसलिए अक्सर दोषियों को ताउम्र कैद की सजा देने की मांग भी उठती रही है। इन तमाम पहलुओं के मद्देनजर अदालतें मृत्युदंड की सजा सुना देती हैं। मगर हकीकत यह भी है कि अनेक ऐसे मामले विचार के लिए लंबे समय तक सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष पड़े रहते हैं। फिर राष्ट्रपति के समक्ष दया याचिका लगाई जाती है। यानी मृत्युदंड अपरिहार्य स्थितियों में ही देने का प्रयास किया जाता है। इसी को देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐसा दिशा-निर्देश बनाने की जरूरत रेखांकित की है, जिससे सभी अदालतों में समान नियम लागू हो सके।

सर्वोच्च न्यायालय एक ऐसा दिशा-निर्देश चाहता है, जिससे यह तय हो सके कि निचली अदालतों में सुनवाई के दौरान किन परिस्थितियों में और कब मौत की सजा को कम करने पर विचार किया जा सकता है। निस्संदेह इस दिशा-निर्देश से निचली अदालतों को मृत्युदंड की सजा सुनाते समय आसानी होगी। दरअसल, अदालतें भी नहीं चाहतीं कि किसी दोषी से उसके सुधरने की संभावना छीन ली जाए। मगर लचीला कानून कई बार जघन्यतम अपराधों पर लगाम लगाने में अवरोध पैदा कर सकते हैं, इसलिए मृत्युदंड का प्रावधान समाप्त करने को लेकर हिचक बनी रहती है। पर इस बात की जरूरत से इनकार नहीं किया जा सकता कि मृत्युदंड की सजा सुनाते वक्त मानवीय पहलुओं के साथ-साथ अपराध शास्त्र के विवेकसम्मत पक्षों का भी ध्यान रखा जाए। इस दृष्टि से सर्वोच्च न्यायालय की पहल निस्संदेह सराहनीय है।

Date:21-09-22

चंदे में पारदर्शिता

संपादकीय

राजनीतिक दलों को मिलने वाले चंदे में पारदर्शिता लाने की मांग पुरानी है। कई लोग इस बात के पक्षधर हैं कि जिस तरह मतदाताओं को अपने प्रतिनिधि के बारे में जानने का हक है, उसी तरह उसके दल को मिलने वाले चंदे के बारे में भी जानकारी मिलनी चाहिए कि वह कहां से आया, किसने कितना चंदा दिया। मगर कोई भी दल इस पारदर्शिता के पक्ष में नहीं दिखता। प्राय: सभी दल अपने चंदे को गोपनीय रखते हैं। चुनावी बांड की व्यवस्था करते समय उम्मीद बनी थी कि पार्टियों को चंदे के रूप में देकर काले धन को छिपाने की प्रवृत्ति पर लगाम लगेगी। मगर उससे भी यह मकसद पूरा नहीं हो पाया। कोई भी बैंक चंदा देने वाले की पहचान उजागर नहीं कर सकता। इस तरह चंदे की पारदर्शिता तो दूर, राजनीतिक दलों को मिलने वाले चंदे की मात्रा में बेतहाशा अंतर आया है। अब निर्वाचन आयोग चंदा उगाही की प्रक्रिया को और पारदर्शी बनाना चाहता है। बताया जा रहा है कि उसने विधि मंत्रालय को पत्र लिख कर सुझाव दिया है कि नकद चंदे की राशि बीस हजार रुपए से घटा कर दो हजार रुपए कर दी जानी चाहिए। चंदे के रूप में मिली नकदी कुल चंदे के बीस फीसद या बीस करोड़ रुपए से अधिक न हो। केंद्र सरकार काले धन को लेकर कड़ा रुख रखती है, इसलिए उसे इस सुझाव को मान लेने में कोई दिक्कत नहीं होनी चाहिए। छिपी बात नहीं है कि बहुत सारे लोग काले धन को सफेद करने के लिए राजनीतिक दलों को चंदे के रूप में दे देते हैं। मगर इतने भर से चुनावों में काले धन के प्रवाह को कितना रोका जा सकेगा, कहना मुश्किल है। पिछले कुछ सालों से जिस तरह चुनाव खर्च में बेतहाशा बढ़ोतरी हुई है, उसे देखते हुए सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि किस तरह नकदी के रूप में काला धन उंड़ेला जाता है। प्रत्याशियों के लिए चुनाव खर्च की सीमा तय है, मगर तय सीमा के भीतर शायद ही किसी बड़ी राजनीतिक पार्टी का प्रत्याशी पैसा खर्च करता हो। अब तो मतदाताओं को रिझाने के लिए तरह-तरह के महंगे उपहार, नकदी आदि भी खूब बांटे जाते हैं। महंगी प्रचार सामग्री, विज्ञापनों की भरमार आदि पर जितना पैसा बहाया जाता है, वह तय सीमा से कई गुना ज्यादा होता है। निर्वाचन आयोग इस पर अंकुश लगाने के लिए अनेक मौकों पर कड़े निर्देश जारी कर चुका है, मगर आज तक एक भी ऐसा प्रत्याशी नहीं मिला, जिसे तय सीमा से अधिक खर्च करने पर दंडित किया गया हो।

राजनीतिक पार्टियां बढ़-चढ़ कर चंदे जुटाने का प्रयास ही इसलिए करती हैं कि वे चुनावी समर में पैसे के बल पर आगे दिख सकें। अगर चुनाव खर्च पर ही अंकुश लगाने में कामयाबी मिल जाए, तो चुनावी चंदे के लिए होड़ भी कम हो जाएगी और राजनीतिक दल परदे में पैसा लेने से बाज आएंगे। यह अधिकार निर्वाचन आयोग के पास है, मगर इस पहलू पर उसे कभी सख्त नहीं देखा जाता। फिर चुनावी बांड को लेकर भी तमाम विपक्षी दलों को एतराज है। बांड के रूप में जो चंदा मिलता है, उसमें से कितना वैध है, किसी को नहीं पता। बैंक चाहें तो उनकी छानबीन कर सकते हैं, मगर इस प्रक्रिया में उनके भी हाथ बंधे हुए हैं। अगर सचमुच निर्वाचन आयोग चंदे में पारदर्शिता को लेकर गंभीर है, तो उसे आमूल-चूल बदलाव का खाका तैयार करना चाहिए।

Date:21-09-22

फैलते हुए ब्रह्मांड की गुत्थी

निरंकार सिंह

लगभग चौदह अरब साल पहले ब्रह्मांड नहीं था, सिर्फ अंधकार था। अचानक एक बिंदु की उत्पत्ति हुई। फिर वह बिंदु मचलने लगा। इस बिंदु के अंदर ही विस्फोट होने लगे। तब अंदर मौजूद प्रोटोनों की आपसी टक्कर से अपार ऊर्जा पैदा हुई। विस्फोट बदला महाविस्फोट में। इन महाविस्फोटों से ब्रह्मांड का निर्माण होता रहा। आज भी ब्रह्मांड में महाविस्फोट होते रहते हैं। इस तरह ब्रह्मांड लगातार फैल रहा है। यही बिग बैंग सिद्धांत है।

ब्रह्मांड लगातार फैल रहा है और इसके फैलने की गति तेज हो रही है। सभी ग्रह-नक्षत्र और आकाशगंगाए एक-दूसरे से दूर होती जा रही हैं। यह रहस्य पिछले दो दशकों से अनसुलझा है कि आखिर ऐसा क्या है, जिसकी वजह से यह विस्तार कायम है और इसकी गति तेज हो रही है। वैज्ञानिक कई तरीकों से इस विस्तार की गति को समझने का प्रयास कर रहे हैं, जिससे वे ब्रह्मांड की उम्र, संरचना और विस्तार जैसे कई अनसुलझे सवालों के जवाब खोज सकते हैं। शिकागो यूनिवर्सिटी के खगोलविदों ने ब्रह्मांड के विकास को समझने के लिए स्पेक्ट्रल सायरन नाम की नई पद्धति सुझाई है, जिसमें ब्लैक होल के टकराव के जरिए वे पुरातन ब्रह्मांड को समझ सकते हैं।

ब्लैक होल के बारे में कहा जाता है कि वह ऐसी जगह है जहां सूचनाएं भी गायब हो जाती हैं, फिर भी वैज्ञानिकों ने कई परोक्ष तरीकों से इनके जरिए ऐसी जानकारी निकालने में सफलता पाई है, जिससे ब्रह्मांड के इतिहास के बारे में पता चल सकता है। नए अध्ययन में दो खगोलविदों ने ऐसी पद्धति का विकास किया है जिसके जरिए टकराने वाले ब्लैक होल के जोड़े का उपयोग कर ब्रह्मांड के विस्तार की गति का मापन किया जा सकता है। इससे हमें पता चल सकेगा कि हमारा ब्रह्मांड कहां से विकसित हुआ, वह किससे बना और वह कहां जा रहा है। ब्रह्मांड के विस्तार की दर क्या है, यही सबसे बड़ा सवाल और बहस का विषय बना हुआ है। इसे हबल स्थिरांक के जरिए परिभाषित किया जाता है, लेकिन इसकी गणना के लिए अलग-अलग पद्धतियों का उपयोग होता है, जिससे अलग-अलग मात्राएं नतीजे में मिलती हैं। इस विवाद को सुलझाने के लिए वैज्ञानिक वैकल्पिक तरीके भी पता लगा रहे हैं। इस संख्या की सटीकता से ही ब्रह्मांड की उम्र, उसके इतिहास और संरचनाओं संबंधी सवालों के उत्तर मिल सकते हैं। नया अध्ययन इस गणना के नए तरीके को प्रस्तावित कर रहा है, जिसमें ब्लैक होल के टकराव से पैदा हुए खगोलीय कंपनों को विशेष डिटेक्टर द्वारा मापा जा सकेगा। जब दो ब्लैक होल आपस में टकराते हैं तो उनसे पूरे ब्रह्मांड में हर तरफ 'आकाश-काल' में एक कंपन फैलती है। पृथ्वी पर अमेरिका में लेजर इंटरफेरोमीटर ग्रेविटेशनल वेव आबजर्वेटरी और इटली की वर्गो वेधशाला इन कंपनों को पकड़ सकते हैं, जिन्हें गुरुत्व तरंगें कहा जाता है।

पिछले कुछ सालों में लीगो और वर्गो ने करीब दस ब्लैक होल जोड़ों के टकरावों के आंकड़े जमा किए हैं। इन तरंगों में ब्लैक होल के भार की जानकारी छिपी होती है। लेकिन ये ब्रह्मांड के विस्तार के कारण, रास्ते में इन तरंगों के गुणों में बदलाव आ जाता है। वैज्ञानिक अगर इन तरंगों में बदलाव का मापन कर सके तो वे ब्रह्मांड के विस्तार की दर का भी पता लगा सकते हैं। फिर भी यहां एक समस्या है कि यह कैसे पता चलेगा कि संकेत मूल रूप से कितने बदले हैं। नए शोध पत्र में जोस मारिया इज्क्यूयागा और डेनियल होल्ज सुझाते हैं कि वे ब्लैक होल की पूरी जनसंख्या की मिली नई जानकारी को आधार बना सकते हैं और भविष्य में बदलाव से तुलना कर ब्रह्मांड के विस्तार की दर का पता लगा सकते हैं।

इस पद्धति से ब्रह्मांड के उस युग के बारे में पता चलेगा जब तथाकथित 'डार्क मैटर' ने ब्रह्मांड में हावी होना शुरू कर दिया होगा। इस संक्रमण काल के अध्ययन में वैज्ञानिकों की विशेष दिलचस्पी है। ब्लैक होल से जितनी जानकारी मिलती जाएगी इस पद्धति की सटीकता भी बढ़ती जाएगी। इसके लिए हमें हजारों की तादाद में संकेत चाहिए, जिसमें एक दो दशक का समय लग सकता है और तब तक यह पद्धति ब्रह्मांड के बारे में सीखने का एक बहुत शक्तिशाली उपकरण बन जाएगी।

ब्लैक होल के अलावा डार्क मैटर और एंटी मैटर पर भी तेजी से खोजबीन चल रही है। लेकिन वे अभी तक रहस्यमय बने हुए हैं। जो भी दिखाई दे रहा है वह मैटर है। मैटर अर्थात पदार्थ। एंटीमैटर आभासित माना गया है, पर डार्ट मैटर की सत्ता है। वैज्ञानिक अभी तक इसकी खोज में लगे हुए हैं कि डार्क मैटर क्या है। ऐसा माना जाता है कि अंतरिक्ष का पंचानबे फीसद हिस्सा डार्क मैटर और डार्क एनर्जी से मिल कर बना है। डार्क मैटर एक आकर्षक शक्ति के रूप में कार्य करता है, एक प्रकार का ब्रह्मांडीय मोर्टार, जो हमारी दुनिया को एक साथ रखता है। ऐसा इसलिए है, कि डार्क मैटर गुरुत्वाकर्षण के साथ इंटरैक्ट करता है, फिर भी प्रकाश को प्रतिबिंबित, अवशोषित या उत्सर्जित नहीं करता। डार्क एनर्जी एक प्रतिकारक बल है, एक प्रकार का एंटी-ग्रेविटी, जो ब्रह्मांड के विस्तार को धीमा कर देता है। ऐसा अनुमान है कि लगभग तेईस प्रतिशत हिस्सा डार्क मैटर ही है। एंटीमैटर की दूर तक कोई सत्ता नहीं है, लेकिन डार्क मैटर सब जगह है।

वैज्ञानिकों के अनुसार डार्क मैटर और डार्क एनर्जी ही वह एक कड़ी है, जिसने इस समूचे ब्रह्मांड को एक क्रमबद्ध ढंग से बांध रखा है। डार्क मैटर ऐसे पदार्थों से मिल कर बने हैं, जो न तो प्रकाश छोड़ते हैं, न सोखते हैं और न ही परावर्तित करते हैं। इस कारण इसे अभी तक देख पाना संभव नहीं हो पाया है। आकाशगंगाओं की खोज में तारों का पीछा करते हुए वैज्ञानिकों ने डार्क मैटर को खोजा। लेकिन वे इसके बारे में कभी सही जानकारी नहीं जुटा सके। यह पता चला कि सभी आकाशगंगा के ग्रह, तारे और नक्षत्र गुरुत्वाकर्षण की बंधन शक्ति के कारण स्थिर हैं। पर गणना करने पर पता चला कि गुरुत्वाकर्षण शक्ति इतनी नहीं है कि वह आकाशगंगा को थाम सके। मतलब कुछ और ही अज्ञात चीज है, जो इन्हें थाम रही है। अन्यथा अब तक गुरुत्वाकर्षण शक्ति कमजोर हो गई होती और सभी ग्रह, नक्षत्र तारे अपने परिक्रमा पथ से भटक गए होते। इसी सोच ने डार्क मैटर की अवधारणा को बल दिया। डार्क मैटर ही इस ब्रह्मांड को द्रव्यमान दे रहा है।

उन्नत तकनीक के इस दौर में कई दशक से धरती और ब्रह्मांड के बारे में अनुसंधान और खोज जारी है। इसके बावजूद वैज्ञानिकों का कहना है कि ऐसा बहुत कुछ है, जिसका पता लगाना बाकी है। इस बीच वैज्ञानिकों को अपनी दुनिया के बारे में तो बहुत कुछ पता है, लेकिन अब उन्हें धीरे-धीरे एक ऐसी दुनिया पर भी यकीन हो गया है, जो हमारी दुनिया से बिल्कुल उलटी है। एनल्स आफ फिजिक्स जर्नल में इस सिद्धांत की विस्तार से व्याख्या की गई है। अनुसंधानकर्ताओं का

यह भी कहना है कि इस दुनिया में न्यूट्रान दाईं तरफ से घूमते होंगे। इस दुनिया की बात को साबित करने के लिए वैज्ञानिक मास न्यूट्रान्स का परीक्षण कर रहे हैं। वे अगर इस परियोजना में कामयाब होते हैं तो इस दूसरी दुनिया की बात साबित हो जाएगी। वैज्ञानिक भी इस संभावना से इनकार नहीं करते हैं कि हमारी दुनिया की ही तरह एक ऐसी भी दुनिया है, जहां वक्त यानी समय का पहिया उल्टा चलता है।

राष्ट्रीय सहारा

Date:21-09-22

खत्म होगा भ्रष्टाचार!

संपादकीय

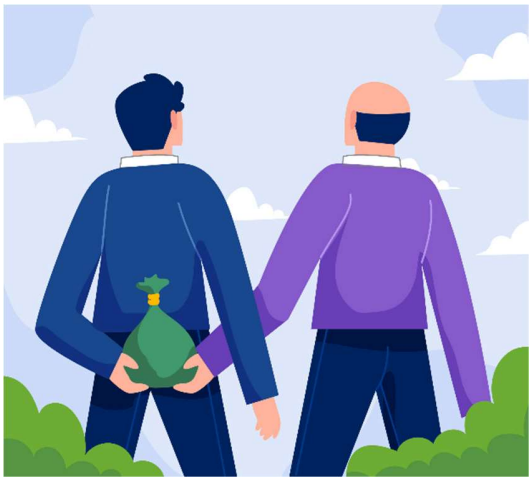

भारत निर्वाचन आयोग ने प्रस्ताव दिया है कि राजनीतिक दलों के लिए एक बार में मिलने वाले नकद चंदे की अधिकतम सीमा 20 हजार रुपये से घटाकर दो हजार रुपये की जाए और कुल चंदे में नकद की सीमा अधिकतम 20 प्रतिशत या 20 करोड़ रुपये तक घोषित की जाए। आयोग को लगता है कि इससे चुनावी चंदा काले धन से मुक्त हो सकेगा। मुख्य चुनाव आयुक्त ने बताया जाता है कि विधि मंत्री किरेन रिजीजू को पत्र लिखकर जन प्रतिनिधित्व कानून में संशोधन की अनुशंसा की है। चुनावी चंदे की व्यवस्था में सुधार और पारदर्शिता लाने के मकसद से यह अनुशंसा की गई है। गौरतलब है कि मौजूदा नियमों के तहत राजनीतिक दलों को उन्हें मिलने वाले 20 हजार रुपये से ज्यादा चंदे का निर्वाचन आयोग के समक्ष खुलासा करना होता है। चुनावी फंडिंग में सुधार की मंशा ही है जो आयोग चाहता है कि चुनाव के दौरान उम्मीदवार एक पृथक खाता खोलें और चुनावी खर्च का समस्त लेन-देन इसी खाते के जरिए हो। आयोग ने अनुशंसा ऐसे समय की है, जब उसे 284 ऐसे दलों को पंजीकृत सूची से मात्र इसलिए हटाना पड़ा है कि वो चंदा संबंधी नियमों का पालन नहीं कर रहे थे। बेशक, समस्या गंभीर है और इसकी तस्दीक उन छापों से भी होती है, जो हाल के समय में आयकर विभाग ने कर चोरी के आरोप में कुछ राजनीतिक इकाइयों के ठिकानों पर मारे थे। दरअसल, चुनावी चंदे को लेकर जो मौजूदा व्यवस्था है, उसके चलते गुमनाम चंदे के संदेह पैदा हुए हैं। संशय रहे हैं कि कहीं यह घूस तो नहीं है। चुनावी चंदे की लचर व्यवस्था ने वैध चुनावी भ्रष्टाचार के हालात पैदा कर दिए हैं। कह सकते हैं कि राजनीति में जो भ्रष्टाचार है, उसकी जड़ें चुनावी चंदे में हैं। चुनावी चंदे का सिलसिला 1952 में पहले ही आम चुनाव से शुरू हो गया था, लेकिन दिनोंदिन मजबूत होते इस चलन को तमाम कोशिशों के बावजूद पारदर्शी नहीं बनाया जा सका है। हालांकि चुनावी फंडिंग में पारदर्शिता का आग्रह इस दौरान बराबर बढ़ा। एक अप्रैल, 2017 को केंद्रीय बजट लागू होते ही चुनावी फंडिंग को वैध बनाया गया ताकि चीजें दुरुस्त हों, लेकिन

हालात जस-के-तस बने रहे। नौबत यहां तक आ गई कि हालिया समय में कुछ राजनीतिक इदारों के ठिकानों पर आयकर के छापे तक मारे गए। बहरहाल, अच्छी बात यह है कि चुनावी चंदे की व्यवस्था में सुधार के प्रयास उत्तरोत्तर जारी हैं।

Live हिन्दुस्तान.com

Date:21-09-22

आचरण की शुचिता

संपादकीय

नोएडा में अवैध रूप से बनी दो गगनचुंबी इमारतों को अदालती आदेश पर गिराए जाने का मंजर अभी जेहन से मिटा भी न था कि मुंबई हाईकोर्ट ने अब केंद्रीय मंत्री नारायण राणे के जुहू स्थित आठ मंजिला बंगले में हुए अवैध निर्माण को दो हफ्ते के भीतर तोड़ने का आदेश दिया है। अदालत ने उन पर 10 लाख रुपये का जुर्माना भी लगाया है। रसूखदार लोगों के खिलाफ आ रहे ऐसे फैसलों के यकीनन दूरगामी असर होंगे। ऊंची अदालतों का रुख ऐसी अराजक गतिविधियों के खिलाफ कितना सख्त हो चला है, इसका अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने तक मोहलत की राणे की मांग भी नहीं मानी गई। इस फैसले का एक साफ संदेश है कि सत्ता के ऊंचे पदों पर बैठे लोग किसी मुगालते में न रहें कि कानून उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकता। ऐसे न्यायिक निर्णय कानून के राज में जनता की आस्था मजबूत करते हैं।

दुर्योग से, जिन लोगों से समाज को दिशा देने की अपेक्षा की जाती है, वे अब अपने विवादों से कहीं अधिक ध्यान खींचने लगे हैं। पंजाब के मुख्यमंत्री भगवंत मान को जर्मनी के फैंरकफर्ट में कथित तौर पर विमान से उतारे जाने की बात सोशल मीडिया पर चंद मिनटों में वायरल हो गई। हालांकि, आम आदमी पार्टी ने इस पूरे प्रकरण को 'प्रॉपगैंडा' करार दिया है और उसकी विरोधी पार्टियां चटकारे ले-लेकर इस खबर को मीडिया में पेश कर रही हैं, मगर यह एक बेहद गंभीर मसला है। इसे राजनीतिक प्रहसन के रूप में कतई नहीं देखा जाना चाहिए। देश के प्रतिष्ठित सांविधानिक पदों पर बैठा हरेक व्यक्ति विदेशी जमीन पर किसी एक पार्टी या समुदाय का प्रतिनिधि नहीं होता, बल्कि वह पूरी भारतीय तहजीब की नुमाइंदगी कर रहा होता है। इसलिए जिम्मेदार पदों पर बैठे लोगों को विदेशी सरजमीं पर अपने आचरण के प्रति खास सावधानी बरतने की जरूरत है। यह समूचे राजनीतिक वर्ग के लिए चिंता की बात होनी चाहिए।

इन दोनों प्रकरणों में हमारे राजनीतिक वर्ग के लिए बेहद जरूरी सबक हैं। राजनीतिक पार्टियां अक्सर दलील देती हैं कि चूंकि जनता ने चुनकर भेजा है, इसलिए वे मंत्री या मुख्यमंत्री हैं। यह बेहद लचर बचाव है। पार्टियां भूल जाती हैं कि

मतदाताओं ने उनको जनादेश दिया था और वे उनसे साफ-सुथरी सरकार की उम्मीद करते हैं। जनता ने किसी को विजयी इसलिए बनाया, क्योंकि उसके सामने उन्होंने अपने प्रतिनिधि के तौर पर उसे ही उतारा था। ऐसे में, किसी भी जन-प्रतिनिधि के आचरण को लेकर संबंधित राजनीतिक दल की जवाबदेही अधिक है। विडंबना यह है कि इस पहलू पर सोचने के लिए कोई पार्टी तैयार नहीं। नतीजतन, विधायी संस्थाओं में दागियों की बढ़ती संख्या समूचे राजनीतिक वर्ग की साख लगातार धूमिल कर रही है। पल-पल बदलती राजनीतिक निष्ठा व प्रतिबद्धता के इस दौर में देश के भीतर पार्टियों को लज्जित होने और विदेश में देश को शर्मसार होने से बचाने के लिए बहुत जरूरी है कि वे अपनी सियासत में नैतिकता की पुनस्र्थापना करें। दागी और अगंभीर उम्मीदवारों को चुनावी मैदान में उतारने से पहले वे इसके गंभीर निहितार्थों पर विचार करें। भारतीय लोकतंत्र ऐसे उदाहरणों से दुनिया में सुर्खरू कतई नहीं हो सकता। 138 करोड़ की आबादी में से चंद हजार बाशऊर लोग यदि हमारे राजनीतिक दल नहीं ढूंढ़ पा रहे, तो वे देश को महान बनाने के दावे किस आधार पर कर सकेंगे?

Date:21-09-22

मेक इन इंडिया के लक्ष्यों को जल्दी हासिल करना होगा

ब्रजेश कुमार तिवारी, (एसोसिएट प्रोफेसर, जेएनयू)

मेक इन इंडिया कार्यक्रम मोदी सरकार की फ्लैगशिप योजना है, इसे शुरू हुए अब आठ वर्ष पूरे होने जा रहे हैं। अभी यह योजना अपने घोषित लक्ष्य से दूर है। इसके मुख्य लक्ष्यों में शामिल है, विनिर्माण क्षेत्र की विकास दर 12-14 प्रतिशत प्रतिवर्ष सुनिश्चित करना, 2022 तक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में विनिर्माण क्षेत्र के योगदान को बढ़ाकर 25 प्रतिशत करना और 2022 तक विनिर्माण क्षेत्र में 10 करोड़ अतिरिक्त नौकरियां पैदा करना। अब ये लक्ष्य 2025 तक बढ़ा दिए गए हैं। हालांकि, वर्तमान गति और बुनियादी ढांचे की कमी के कारण लक्ष्य 2025 तक भी पूरा होता नहीं दिख रहा है।

कोरोना महामारी के दौरान इस बात का प्रचार हुआ कि जो कंपनियां चीन छोड़ेंगी, वे भारत आने वाली हैं। हालांकि, उनमें से अधिकांश कंपनियों ने अपना आधार वियतनाम, ताइवान, थाईलैंड आदि बना लिया। कुछ ही भारत आईं। गौर कीजिए, भारत के जीडीपी में विनिर्माण क्षेत्र की हिस्सेदारी 16 से घटकर 14 फीसदी हो गई है, इसलिए केंद्रीय वित्त मंत्री ने विनिर्माण क्षेत्र से निवेश बढ़ाने की अपील की थी। शुरुआत में मेक इन इंडिया कार्यक्रम मुख्य रूप से रक्षा उत्पादन पर केंद्रित था। साल 2016-2020 के बीच हथियारों के आयात में 33 प्रतिशत की गिरावट आई भी, लेकिन भारत अब भी सऊदी अरब के बाद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा हथियार आयातक देश बना हुआ है।

भारत का विनिर्माण क्षेत्र आज जिस स्थिति में है, उसके लिए सिर्फ कोरोना जिम्मेदार नहीं है। चीन के जीडीपी में इस क्षेत्र की हिस्सेदारी 29 फीसदी है। भारत की तुलना में अपने-अपने जीडीपी में विनिर्माण का बड़ा हिस्सा रखने वाले अन्य एशियाई देशों में दक्षिण कोरिया (26 प्रतिशत), जापान (21 प्रतिशत), थाईलैंड (27 प्रतिशत), सिंगापुर और मलेशिया (21 प्रतिशत), इंडोनेशिया और फिलीपींस (19 प्रतिशत) शामिल हैं।

यह सच है कि सरकार निरंतर आर्थिक विकास प्रदान करने और अंतरराष्ट्रीय व्यापार में इसकी प्रासंगिकता बढ़ाने के लिए एक प्रतिस्पद्र्धी, गतिशील वातावरण बनाने के प्रयास कर रही है और इसका परिणाम भी कुछ क्षेत्रों में दिख रहा है। भारतीय कंपनियों द्वारा कोरोना टीकों का विकास स्वदेशी प्रतिभा का एक बड़ा उदाहरण है। आज भारत एक पसंदीदा निवेश गंतव्य के रूप में उभरा है, जो इस तथ्य से साफ है कि भारत ने पिछले वित्तीय वर्ष में 84 अरब डॉलर का अब तक का सबसे अधिक वार्षिक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) दर्ज किया है।

विश्व बैंक द्वारा जारी 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' सूचकांक में भी भारत ने तेजी से जगह बनाई है। वर्ष 2014 में वह इसमें 134वें पायदान पर था, जो 2021 में 63वां हो गया। विश्व आर्थिक मंच द्वारा प्रकाशित 'ग्लोबल कॉम्पेटिटिवनेस रिपोर्ट इंडेक्स' में भारत 43वें स्थान पर है, जहां वह 2014 में 60वें स्थान पर था।

इन सुधारों के बावजूद देश विनिर्माण क्षेत्र में लक्ष्य से पीछे रहा है। मेक इन इंडिया अभियान को अपेक्षित सहयोग नहीं मिल पा रहा है। स्वरोजगार को बढ़ावा देने के तमाम प्रयासों के बावजूद बेरोजगारी की स्थिति चिंताजनक है। मगर यह रातोंरात नहीं हुआ है। किसी कंपनी का बंद होना, यानी हजारों लोगों का रोजगार जाना। फोर्ड, जनरल मोटर्स, मैन ट्रक्स, फिएट, हार्ले डेविडसन, यूएम मोटरसाइकिल जैसी कंपनियों ने पिछले पांच साल में भारतीय बाजार से बाहर निकलने का फैसला किया है। आखिर हम लक्ष्य के अनुरूप तेजी क्यों हासिल नहीं कर पा रहे हैं? हमारा विनिर्माण क्षेत्र बड़ी मात्रा में कागजी कार्रवाई, श्रम, भूमि या पर्यावरण मंजूरी, कठिन नियमों और नीति से विवश है। घरेलू विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिए मार्च 2020 में प्रोडक्शन-लिंक्ड इंसेंटिव योजना शुरू की गई थी, देखना चाहिए कि उसके परिणाम अच्छे आएं। कराधान व सीमा शुल्क की नीतियां अभी भी इतनी पेचीदी हैं कि घरेलू निर्माण के बजाय चिकित्सा उपकरण जैसी चीजों का आयात करना सस्ता है।

भारत भविष्य में वैश्विक कारखाना बन सकता है। वैसे भी दुनिया चीन से तंग आ चुकी है और वैकल्पिक मैन्युफैक्चरिंग हब की तलाश कर रही है। जरूरी है, बोझिल नियमों से विनिर्माण क्षेत्र को मुक्त किया जाए। जाहिर है, भारत के पास आराम करने का समय नहीं है।